ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.18, NO.1, JAN-JUNE,2023 /80

अमृत काल और भारतीय लोकतंत्र के समक्ष चुनौतियाँ

डॉ0 पीयूष कुमार जायसवाल
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग
जवाहर लाल नेहरू स्मा0 पी0जी0 कालेज, महराजगंज

अमृत काल का आशय भारत की स्वतंत्रता के स्वर्णिम 75वें वर्ष को भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने सर्वप्रथम इस शब्द को प्रयोग करते हुए अगले 25 वर्ष को उत्सव के रूप में देखने का प्रयास किया है और देश के विकास के समस्त कार्यों को 'अमृत काल' के साथ जोड़कर देखा जा रहा है। वास्तव में 'अमृत काल' कोई नया शब्द नहीं है, इसे वैदिक ज्योतिष में प्रयोग किया जाता रहा है। प्राचीन कालीन ज्योतिष विज्ञान अमृत काल के मूल आशय को सम्पूर्ण मानवता के साथ जोड़कर देवदूतों एवं व्यक्तियों के लिए जिस समय आधिकाधिक सुख के द्वार खुल जाय उसे 'अमृत काल' कहा जाता है। अर्थात् ऐसे समय में जब नये कार्य की शुरूआत हो ऐसे शुभ मुर्हुत को अमृत काल की संज्ञा दी जाती है।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के अमृत काल का आशय आने वाले 25 वर्षों के इतिहास में भारतीय उन सभी कुरीतियों से मुक्त रहे जो भारतीय लोकतंत्र के समक्ष चुनौतिक के रूप में हैं। गरीबी, भ्रष्टाचार, निरक्षरता, लैंगिक भेदभाव, महिलाओं के प्रति हिंसा, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद, अपराध एवं हिंसा जैसी कुरीतियों से देश मुक्त रहे। भारतीय लोकतंत्र स्वतंत्रता के पश्चात् विकसित प्रत्यक्ष लोकतंत्र था जो वर्तमान परिवेश में प्रतिनिधि लोकतंत्र के रूप में कार्य कर रहा है।

लोकतंत्र एक शासन प्रणाली ही नहीं, बल्कि एक जीवन–दर्शन है। प्रसिद्ध विचारक लास्की का विचार है कि ''सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र के अभाव में राजनीतिक लोकतंत्र मृग–मारीचिका के समान है।'' सभी लोकतांत्रिक देशों में न्यायपालिका कानून के आधार पर विवादों का फैसला करती है। ऐसा करते समय वह कानून की व्याख्या करती है। अधिकांश रूप में ऐसी व्याख्याओं से कानून का विस्तार या संकुचन होता है। न्यायपालिका द्वारा बनाये गये कानूनों से अधिकांश संवैधानिक प्रावधानों खासकर जनता के मूलाधिकारों के सम्बन्ध में कई परिवर्तन किये गये। भारतीय न्यायपालिका भी इससे अछूती नहीं है। स्वतंत्रता के पश्चात् अपने मूल अधिकारों और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों के साथ भारत के संविधान ने एक विविधतापूर्ण समाज में लोकतांत्रिक कानूनी व्याख्या की आवश्यकताओं के अनुसार कानून में सुधार को एक नई दिशा प्रदान की। भारतीय संविधान ने संविधान पूर्व कानूनों को संशोधन या वापस लेते तक जारी रखने हेतु परम्परागत कानूनों के पुनरीक्षण एवं उनको आधुनिक बनाने का सुझाव भी पारित किया गया था। भारत सरकार द्वारा प्रथम विधि आयोग की स्थापना 1955 में सकारात्मक प्रतिक्रिया द्वारा किया गया था।[1]

स्वतंत्र भारत के संविधान का निर्माण उन प्रयासों का परिचायक है जो विउपनिवेशीकरण के पश्चात् स्वतंत्र राज व्यवस्था की राष्ट्रवादी तथा प्रजातांत्रिक आकांक्षाओं को यर्थाथ रूप देने के लिए संस्थाओं द्वारा किया गया था। इसके अतिरिक्त कम से कम संरचनात्मक तथा प्रक्रियात्मक दृष्टि से संविधान में एक सतत् प्रवाह जारी है, तथापि यह अतीत से स्पष्ट रूप से भिन्न है क्योंकि 1950 का संविधान उपनिवेशवाद के समापन के पश्चात उदारवादी लोकतंत्र की स्थापना की विचारधारा पर आधारित था।[2]

स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही हम सामाजिक समरसता स्थापित करने के बात करते आ रहे हैं परन्तु व्यवहारिक धरातल पर समाज के किसी भी पक्ष में असमानता के उदाहरण सहज ही देखे जा सकते हैं, गरीबी की रेखा से नीचे रहने वालों की स्थिति दयनीय होती जा रही है। जातिगत एवं वैमनस्य दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। विभिन्न क्षेत्रों में आरक्षण की सुविधा ने समाज के स्वरूप को अणुवादी बना दिया है। भारत धर्म निरपेक्ष राष्ट्र घोषित हो चुका है परन्तु आज तक समान नागरिकता संहिता लागू नहीं की जा सकी हे। लोकपाल विधेयक सदन में आज तक नहीं पास हो सका है। ऐसे में लोकतंत्र के उज्जवल भविष्य की कामना की जा सकती है।

व्यक्ति के अधिकारों, स्वंत्रता तथा विकास को लोकतंत्र में पवित्रता के भाव से देखा जाता है। परन्तु भारतीय संदर्भ में लोकतंत्र के ये सिद्धान्त आदर्श अधिक और यर्थाथ कम है। आज एक ओर समाज का सशक्त वर्ग आम आदमी के अधिकारों तथा स्वतंत्रता का हरण कर रहा है तो दूसरी ओर पुलिस आम आदमी के अधिकारों की रक्षा कम उत्पीड़न अधिक कर रही है। इसे तो लोकतंत्र का उपहास ही कहा जा सकता।

आज हमारा लोकतंत्र अनुशासनहीनता का जीता जागता उदारहण बन गया है। स्वाधीनता के नाम पर स्वच्छन्दता की सीमाओं का उल्लंघन आम बात हो गयी है। राजनेता, अधिकारी तथा आम कर्मचारी सभी अपने अधिकारों की सीमा का उल्लंघन कर रहे हैं।

हमारे सांसद तथा विधायक अपने व्यवहार द्वारा संसदीय शालीनता की सभी मर्यादाओं को तोड़ रहे है, वे आये दिन आपस में गाली–गलौज तथा मारपीट करे हुए देखे जा सकते हैं। भारतीय राजनीति का स्वरूप विकृत हो गया है। इस देश की राजनीति आदर्शविहीन होकर केवल लुभावने नारों के बल पर येन–केन–प्रकारेण सत्ता पर स्थापित होने का माध्यम बनकर रह गयी थी। दलबदल द्वारा जिस तरह से लोकत का मखौल उड़ाया जा रहा था वह लोकतंत्र के भविष्य पर प्रश्न चिह्न लगाता है। राजनीतिक दल निर्धन एवं अशिक्षित जनता को उल्टा–सीधा समझ कर अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं आज की राजनीतिक तृष्णा रूपी बेलों को चढ़ने वाली जलधारा है। सत्कार्य रूपी चित्रों को मलिन करने वाली धुँऐं की राशि है। असत्य, लालच, लोभ, छल–कपट, दबाव रूपी राजनीति हो रही है। यह धन–सम्पत्ति के रूप में निर्धनों के मन को लुभा लेती है। बम, बारूद के बल पर दिमाग में कम्पन्न उत्पन्न करती है। देश की मर्यादा संसद भवन में अपना रण–कौशल प्रदर्शित करती है। जातीय उन्माद फैलाकर सामाजिक व्यवस्था को विशाक्त किया जा रहा है। पूर्व की राजनीति कुत्सित मानसिकता वाले भाषण रूपी वाणों से ह्रदय विर्दीण करती है तथा बाद में सत्ता प्राप्त करने के पश्चात घोटालों का भोजन परोसती थी।

भारतीय लोकतंत्र के भविष्य के सम्बन्ध में एक चिन्ताजनक पहलू यह भी है कि यहाँ भ्रष्टाचार संक्रामक रोग की तरह समांज के सभी क्षेत्रों में तेजी से फैल रहा है। भ्रष्टाचार परमो धरमः राजनेताओं का आदर्श बन गया था। नित नये घोटाले प्रकाश में आ रहे हैं जो कि भारतीय लोकतंत्र के चहरे पर कालिख पोत रहे हैं। कभी चारा घोटाला कभी यूरिया घोटाला तो किसी के घर से नगद नोटों की गड्डी बोरे से निकलती रही है। यथा राजा तथा प्रजा– इसी कारण अधिकारी वर्ग से लेकर लिपिक वर्ग सभी भ्रष्टाचार की बहती गंगा में हाथ धो रहे थे।

सार्थक शिक्षा का अभाव भारतीय लोकतंत्र के भविष्य हेतु अशुभ लक्षण है पूर्व में हमारे देश में जो शिक्षा प्रणाली प्रचलित थी वह बेरोजगारों की लम्बी कतार खड़ी कर चुकी है जो अपनी निराशा, कुण्ठा एवं तनाव के चलते विध्वंसात्मक कार्यों में संलग्न होते जा रहे थे। वे चुनावों को आजीविका के

एक माध्यम के रूप में देखते हैं और उसमें भाग लेते समय विवेक को तिलांजलि दे देते हैं। नई शिक्षा नीति 2020 पूर्व की शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन कर नई मिशाल स्थापित कर रही है।

सम्प्रति भारतीय लोकतंत्र को नानाविधि पृथकतावादी प्रवृत्तियों का सामना करना पड़ रहा है, जिनकी उपस्थिति ही लोकतंत्र के अस्तित्व को नकार देती है। आजादी के बाद से ही कभी भाषा के नाम पर कभी विकसित–अविकसित क्षेत्र का नारा देकर तो कभी धर्म और जाति के नाम पर मानवीय भावनाओं को भड़काकर विविधताओं के एकतावादी भारतीय एकता को खण्डित करने की कुचेष्ठा की गयी है।

भारतीय लोकतंत्र की रीढ़ कही जाने वाले निर्वाचन प्रणाली को भी दोषयुक्त कहा गया। बहुदलीय शासन प्रणाली की दोषयुक्त पतवार ने देश को आर्थिक हानि तो पहुँचाया ही है, उसे राजनीतिक अस्थिरता की आग में झोंक दिया था, इसके अतिरिक्त धर्मगत, जातिगत एवं क्षेत्रगत भावनाओं को भड़काकर बनने वाले राजनीतिक दलों ने नागरिकों के आपसी सदभाव को भी समाप्त करने की कुचेष्ठा की थी। इसके कारण भारतीय लोकतंत्र की कश्ती कठिनाइयों के ऐसे भँवरजाल में फँस गयी थी जहाँ वह डगमगाती हुई अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए अन्तिम संघर्ष कर रही थी।

भारत की न्यायिक प्रक्रिया एक ऐसी विलम्बित प्रक्रिया है जिसमें प्राप्त न्याय, अन्याय का भेद मिट गया है। निचली अदालत के निर्णय को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा बदल देना तथा उच्च न्यायालय के निर्णय को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निरस्त कर देना भारतीय न्याय व्यवस्था पर प्रश्न चिह्न खड़ा करता है। एक ही मामले में किसी अभियुक्त को बिना आरोप पत्र दाखिल किये जेल में रखना और उसी अभियोग के अन्य अभियुक्त को जमानत दे देना क्या भारतीय न्याय व्यवस्था का उपहास नहीं उड़ाता?

शाहबानो प्रकरण में उच्चतम न्यायालय के निर्णय को निरस्त करने के लिए संविधान में संशोधन करके लोकतंत्र की व्यवस्था को ही संदेह के घेरे में खड़ा कर दिया गया था। इस प्रकार की घटनाओं ने कहीं न कहीं भारतीय लोकतंत्र के समक्ष चुनौतियाँ प्रस्तुत की है। वर्तमान भारतीय जनता पार्टी की सरकार के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा पूरे देश में परिवर्तन की एक नई दिशा तय कर दी है जो अमृत काल की भावना को अवश्य ही सम्बल प्रदान करेगा।

संदर्भ–सूची

1. शिवनी किंकर चौबे, भारतीय संविधानःरचना एवं कार्य, राष्ट्रीय बुक न्यास भारत, नई दिल्ली, पृ0 6
2. विद्युत चक्रवर्ती एवं राजेन्द्र कुमार पाण्डेय, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, विचार व संदर्भ सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ0 367
3. प्रतियोगिता दर्पण, दिसम्बर 1997, पृष्ठ, 953
4. चौबे, शिवानी किंकर, भारतीय संविधान, रचना एवं कार्य, पृष्ठ, 05
5. प्रतियोगिता दर्पण, दिसम्बर 1997, पृष्ठ, 954